Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 16, Issue No. 6, May-2019, ISSN 2230-7540

भारत में अंग्रेजों की भू-राजस्व नीतियां अध्ययन

Monu*

M.A. in History (UGC NET /JRF) MDU, Rohtak

शोध सारः अंग्रेजों की भारत विजय के बाद पुरानी व्यवस्था में आमूल परिवर्तन का सिलसिला शुरू हुआ। नई लगान व्यवस्था ने गाँव की जमीन पर लोगों की जमाने से चली आ रही मिल्कियत खत्म कर उसकी जगह भूस्वामित्व के इन रूपों को जन्म दिया- इजारेदारी प्रथा, स्थायी बन्दोबस्त या जमींदारी प्रथा, 'महालवाड़ी व्यवस्था' एवं 'रैय्यतवाड़ी व्यवस्था'। लगान व्यवस्था के अंतर्गत 1790 ई. में लॉर्ड कॉर्नवॉलिस ने दसवर्षीय व्यवस्था को लागू किया था। यह व्यवस्था 1793 ई. में बंगाल, बिहार और उड़ीसा में स्थाई रूप से लागू कर दी गई। ब्रिटिश भारत की 19 प्रतिशत भूमि पर यह व्यवस्था निश्चित कर दी गई थी। इसके बाद 'महालवाड़ी व्यवस्था' का प्रस्ताव सर्वप्रथम 1819 ई. में 'हॉल्ट मैकेंजी' द्वारा लाया गया। सबसे पहले यह व्यवस्था उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश एवं पंजाब में लागू की गई थी। इसके अंतर्गत भूमि का लगभग 30 प्रतिशत भाग शामिल था। 1792 ई. में 'रैय्यतवाड़ी व्यवस्था' मद्रास के बारामहल में पहली बार लागू की गई। मद्रास में यह व्यवस्था 30 वर्षों तक लागू रही। 1835 ई. में भू-सर्वेक्षण के आधार पर इसे बम्बई में भी लागू कर दिया गया था। इस शोध-पत्र में भारत में अंग्रेजों की भू-राजस्व नीतियों के अध्ययन पर प्रकाश डाला गया है।

मुख्य शब्दः परिवर्तन, भू-राजस्व नीतियां इजारेदारी प्रथा, स्थायी बन्दोबस्त या जमींदारी प्रथा, 'महालवाड़ी व्यवस्था' एवं 'रैय्यतवाड़ी व्यवस्था'।

----------X----------

अंग्रेजों के आगमन से पूर्व भारत में जो परम्परागत भूमि व्यवस्था कायम थी उसमें भूमि पर किसानों का अधिकार था तथा फसल का एक भाग सरकार को दे दिया जाता था। 1765 में इलाहाबाद की संधि के द्वारा ईस्ट इंडिया कम्पनी ने बंगाल, बिहार एवं उड़ीसा की दीवानी प्राप्त कर ली। यद्यपि 1771 तक ईस्ट इंडिया कम्पनी ने भारत में प्रचलित पुरानी भू-राजस्व व्यवस्था को ही जारी रखा किंतु कम्पनी ने भू-राजस्व की दरों में वृद्धि कर दी। धीरे-धीरे कम्पनी के खर्चे में वृद्धि होने लगी, जिसकी भरपाई के लिये कम्पनी ने भू-राजस्व की दरों को बढ़ाया। ऐसा करना स्वाभाविक भी था क्योंकि भू-राजस्व ही ऐसा माध्यम था जिससे कम्पनी को अधिकाधिक धन प्राप्त हो सकता था। ईस्ट इंडिया कम्पनी ने अपने आर्थिक व्यय की पूर्ति करने तथा अधिकाधिक धन कमाने के उद्देश्य से भारत की कृषि व्यवस्था में हस्तक्षेप करना प्रारंभ कर दिया तथा कृषि के परम्परागत ढांचे को समाप्त करने का प्रयास किया। यद्यपि क्लाइव तथा उसके उत्तराधिकारियों के समय तक भू-राजस्व पद्धति में कोई बड़ा परिवर्तन नहीं किया गया तथा इस समय तक भू-राजस्व की वसूली बिचैलियों (जमीदारों या लगान के ठेकेदारों) के माध्यम से ही की जाती रही, किंतु उसके पश्चात कम्पनी द्वारा नये प्रकार के कृषि संबंधों की शुरुआत की गयी। इसके परिणामस्वरूप कम्पनी ने करों के निर्धारण और वसूली के लिये कई नये प्रकार के भू-राजस्व बंदोबस्त कायम किये। मुख्य रूप से अंग्रेजों ने भारत में तीन प्रकार की भू- राजस्व पद्धतियां अपनायीं: 1. इजारेदारी प्रथा, 2. स्थायी बंदोबस्त, 3. महालवाड़ी, 4. 'रैय्यतवाड़ी व्यवस्था'।

यद्यपि प्रारंभ में (1772 में) वारेन हेस्टिंग्स ने इजारेदारी प्रथा भी प्रारंभ की थी किंतु यह व्यवस्था ज्यादा दिनों तक नहीं चली तथा ब्रिटिश शासनकाल में यही तीन भू-राजस्व व्यवस्थायें हीं प्रभावी रहीं। इजारेदारी प्रथा मुख्यतया बंगाल में ही लागू की गयी थी। तत्पश्चात लागू की गयी जमींदारी या स्थायी बंदोबस्त व्यवस्था को बंगाल, बिहार, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश के बनारस तथा कर्नाटक के उत्तरी भागों में लागू किया गया। रैयतवाड़ी पद्धति मद्रास, बम्बई तथा असम के कुछ भागों में लागू की गयी। जबकि महालवाड़ी पद्धति मध्य प्रांत, यू.पी. एवं पंजाब में लागू की गयी। इन विभिन्न भू-राजस्व व्यवस्थाओं का वर्णन इस प्रकार है

इजारेदारी प्रथाः

1772 में वारेन हेस्टिंग्स ने एक नयी भू-राजस्व पद्धति लागू की, जिसे 'इजारेदारी प्रथा' के नाम से जाना गया है। इस

www.ignited.in

पद्धति को अपनाने का मुख्य उद्देश्य अधिक भू-राजस्व वसूल करना था। इस व्यवस्था की मुख्य दो विशेषतायें थीं- इसमें पंचवर्षीय ठेके की व्यवस्था थी। तथा सबसे अधिक बोली लगाने वाले को भूमि ठेके पर दी जाती थी। किंतु इस व्यवस्था से कम्पनी को ज्यादा लाभ नहीं हुआ क्योंकि इस व्यवस्था से उसकी वसूली में अस्थिरता आ गयी। पंचवर्षीय ठेके के इस दोष के कारण 1777 ई. में इसे परिवर्तित कर दिया गया तथा ठेके की अवधि एक वर्ष कर दी गयी। अर्थात अब भू-राजस्व की वसूली का ठेका प्रति वर्ष किया जाने लगा। किंतु प्रति वर्ष ठेके की यह व्यवस्था और असफल रही। क्योंकि इससे भू-राजस्व की दर तथा वसूल की राशि की मात्रा प्रति वर्ष परिवर्तित होने लगी। इससे कम्पनी को यह अनिश्चितता होती थी कि अगले वर्ष कितना लगान वसूल होगा। इस व्यवस्था का एक दोष यह भी था कि प्रति वर्ष नये-नये व्यक्ति ठेका लेकर किसानों से अधिक से अधिक भू-राजस्व वसूल करते थे। चूंकि इसमें इजारेदारों (ठेकेदारों या जमींदारों) का भूमि पर अस्थायी स्वामित्व होता था, इसलिये वे भूमि सुधारों में कोई रुचि नहीं लेते थे। उनका मुख्य उद्देश्य अधिक से अधिक लगान वसूल करना होता था। इसके लिये वे किसानों का उत्पीड़न भी करते थे। ये इजारेदार वसूली की पूरी रकम भी कम्पनी को नहीं देते थे। इस व्यवस्था के कारण किसानों पर अत्यधिक बोझ पड़ा। तथा वे कंगाल होने लगे। यद्यपि यह व्यवस्था काफी दोषपूर्ण थी फिर भी इससे कम्पनी की आय में वृद्धि हुयी।

स्थायी बंदोबस्तः

बंगाल की लगान व्यवस्था 1765 से ही कम्पनी के लिये एक समस्या बनी हुयी नहीं। क्लाइव ने इस व्यवस्था में कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं किया तथा उसके काल में वार्षिक लगान व्यवस्था ही जारी रही। बाद में वारेन हेस्टिंग्स ने लगन व्यवस्था में सुधार के लिए इजारेदारी प्रथा लागु की किन्तु इससे समस्या सुलझने के बजाय और उलझ गयी। इस व्यवस्था के दोषपूर्ण प्रेअव्धनों के कारण कृषक बर्बाद होने लगे तथा कृषि का पराभव होने लगा।

1886 में जब लार्ड कार्नवालिस गवर्नर-जनरल बनकर भारत आया उस समय कम्पनी की राजस्व व्यवस्था अस्त-व्यस्त थी तथा उस पर पर्याप्त वाद-विवाद चल रहा था। अतः उसके सम्मुख सबसे प्रमुख कार्य कम्पनी की लगान व्यवस्था में सुधार करना था। प्रति वर्ष ठेके की व्यवस्था के कारण राजस्व वसूली में आयी अस्थिरता एवं अन्य दोषों के कारण कम्पनी के डायरेक्टरों ने कार्नवालिस को आदेश दिया कि वह सर्वप्रथम लगान व्यवस्था की दुरुस्त करे तथा वार्षिक ठेके की व्यवस्था से उत्पन्न दोषों को दूर करने के लिये जमींदारों से स्थायी समझौता कर ले। डायरेक्टरों का यही आदेश अंत में स्थायी बंदोबस्त व्यवस्था का सबसे मुख्य कारण बना। इसके फलस्वरूप भू-राजस्व या लगान के संबंध में जो व्यवस्था की गयी, उसे 'जर्मीदारी व्यवस्था' या 'इस्तमरारी व्यवस्था' या 'स्थायी बंदोबस्त व्यवस्था' के नाम से जाना जाता है।

प्रधानमंत्री पिट्, बोर्ड आफ कंट्रोल के सभापति डण्डास, कम्पनी के डायरेक्टर्स, जॉन शोर, चार्ल्स ग्रांट तथा कार्नवालिस की आपसी सहमति से 1790 में जमींदारों के साथ 10 वर्ष के लिये समझौता किया गया, जिसे 22 मार्च 1793 में स्थायी कर दिया गया। यह व्यवस्था बंगाल, बिहार, उड़ीसा, यू.पी. के बनारस प्रखण्ड तथा उत्तरी कर्नाटक में लागू की गयी। इस व्यवस्था के तहत ब्रिटिश भारत के कुल क्षेत्रफल का लगभग 19 प्रतिशत भाग सम्मिलित था।

स्थायी बंदोबस्त की विशेषतायें: इसकी निम्न विशेषतायें थीं-

- जमीदारों को भूमि का स्थायी मालिक बना दिया गया। भूमि पर उनका अधिकार पैतृक एवं हस्तांतरणीय था। उन्हें उनकी भूमि से तब तक पृथक नहीं किया जा सकता था, जब तक वे अपना निश्चित लगान सरकार को देते रहें।
- किसानों को मात्र रैयतों का नीचा दर्जा दिया गया तथा उनसे भूमि सम्बन्धी तथा अन्य परम्परागत अधिकारों को छीन लिया गया।
- जमींदार, भूमि के स्वामी होने के कारण भूमि को खरीद या बेच सकते थे।
- जमींदार, अपने जीवनकाल में या वसीयत द्वारा अपनी जमींदारी अपने वैध उत्तराधिकारी को दे सकते थे।
- जमींदारों से लगान सदैव के लिये निश्चित कर दिया गया।
- सरकार का किसानों से कोई प्रत्यक्ष सम्पर्क नहीं था।
- जमीदारों को किसानों से वसूल किये गये भू-राजस्व की कुल रकम का 10/11 भाग कम्पनी को देना था तथा 1/11 भाग स्वयं रखना था।

www.ignited.in

- तय की गयी रकम से अधिक वसूली करने पर, उसे रखने का अधिकार जमींदारों को दे दिया गया।
- यदि कोई जमींदार निश्चित तारीख तक, भू-राजस्व की निर्धारित राशि जमा नहीं करता था तो उसकी जमींदारी नीलाम कर दी जाती थी।
- कम्पनी की आय में उल्लेखनीय वृद्धि हुयी।

स्थायी बंदोबस्त के उद्देश्यः

कंपनी द्वारा भू-राजस्व की स्थायी बंदोबस्त व्यवस्था को लागू करने के मुख्य दो उद्देश्य थे –

- इंग्लैण्ड की तरह, भारत में जमींदारों का एक ऐसा वर्ग तैयार करना, जो अंग्रेजी साम्राज्य के लिये सामाजिक आधार का कार्य कर सके। इसीलिये अंग्रेजों ने जमींदारों का ऐसा वर्ग तैयार किया जो कम्पनी की लूट-खसोट से थोड़ा सा हिस्सा प्राप्त कर संतुष्ट हो जाये तथा कम्पनी को सामाजिक आधार प्रदान करे।
- कम्पनी की आय में वृद्धि करना। चूंकि भू-राजस्व कम्पनी की आय का अत्यंत प्रमुख साधन था अतः कम्पनी अधिक से राजस्व प्राप्त करना चाहती थी।

स्थायी बंदोबस्त व्यवस्था के लाभ व हानियां:

स्थायी बंदोस्त व्यवस्था के संबंध में इतिहासकारों ने अलग-अलग राय प्रकट की है। कुछ इतिहासकारों ने इसे साहसी एवं बुद्धिमत्तापूर्ण कार्य माना है तो कुछ ने इसका तीव्र विरोध किया है। तुलनात्मक तौर पर इस व्यवस्था से होने वाले लाभ व हानियां इस प्रकार थीं-

लाभः जमींदारों को

- इस व्यवस्था से सबसे अधिक लाभ जमींदारों को ही हुआ। वे स्थायी रूप से भूमि के मालिक बन गये।
- लगान की एक निश्चित रकम सरकार को देने के पश्चात काफी बड़ी धनराशि जमींदारों को प्राप्त होने लगी।
- अधिक आय से कालांतर में जमींदार अत्यधिक समृद्ध हो गये तथा वे सुखमय जीवन व्यतीत करने लगे। बहुत से जमींदार तो गांव छोड़कर शहरों में बसे गए।

लाभः सरकार को

- जमींदारों के रूप में सरकार को ऐसा वर्ग प्राप्त हो गया, जो हर परिस्थिति में सरकार का साथ देने को तैयार था। जमींदारों के इस वर्ग ने कई अवसरों पर ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध किये गये विद्रोहों को कुचलने में सरकार की सहायता की।
- सरकार की आय में अत्यधिक वृद्धि हो गयी।
- सरकार की आय निश्चित हो गयी, जिससे अपना बजट तैयार करने में उसे आसानी हुयी।
- सरकार को प्रतिवर्ष राजस्व की दरें तय करने एवं ठेके देने के झंझट से मुक्ति मिल गयी।
- कम्पनी के कर्मचारियों को लगान व्यवस्था से मुक्ति मिल गयी, जिससे वे कम्पनी के व्यापार की ओर अधिक ध्यान दे सके। उसके प्रशासनिक व्यय में भी कमी आयी तथा प्रशासनिक कुशलता बढ़ी।

अन्य कोः

- राजस्व में वृद्धि की संभावनाओं के कारण जमींदारों ने कृषि में स्थायी रूप से रुचि लेनी प्रारंभ कर दी तथा कृषि उत्पादन में वृद्धि के अनेक प्रयास किये। इससे कृषि उत्पादन में वृद्धि हुयी।
- कृषि में उन्नति होने से व्यापार एवं उद्योग की प्रगति हुयी।
- जमींदारों से न्याय एवं शांति स्थापित करने की जिम्मेदारी छीन ली गयी, जिससे उनका ध्यान मुख्यतया कृषि के विकास में लगा तथा इससे सूबों की आर्थिक संपन्नता में वृद्धि हुयी।
- सूबों की आर्थिक संपन्नता से सरकार को लाभ हुआ।

हानियां:

- इस व्यवस्था से सबसे अधिक हानि किसानों को हुयी। इससे उनके भूमि संबंधी तथा अन्य परम्परागत अधिकार छीन लिये गये तथा वे केवल खेतिहर मजदूर बन कर रह गये।

www.ignited.in

- किसानों को जमींदारों के अत्याचारों व शोषण का सामना करना पड़ा तथा वे पूर्णतया जमीदारों की दया पर निर्भर हो गये।
- वे जमींदार, जो राजस्व वसूली की उगाही में उदार थे, भू-राजस्व की उच्च दरें सरकार को समय पर नहीं अदा कर सके, उन्हें बेरहमी के साथ बेदखल कर दिया गया तथा उनकी जमींदारी नीलाम कर दी गयी।
- जमीदारों के समृद्ध होने से वे विलासितापूर्ण जीवन व्यतीत करने लगे। जिससे सामाजिक भ्रष्टाचार में वृद्धि हुयी।
- इस व्यवस्था ने कालांतर में राष्ट्रीय स्वतंत्रता संघर्ष को भी हानि पहुंचायी। जमींदारों का यह वर्ग स्वतंत्रता संघर्ष में अंग्रेज भक्त बना रहा तथा कई अवसरों पर तो उसने राष्ट्रवादियों के विरुद्ध सरकार की मदद भी की।
- इस व्यवस्था से किसान दिनों-दिन निर्धन होते गये तथा उनमें सरकार तथा जमींदारों के विरुद्ध असंतोष बढ़ने लगा। कालांतर में होने वाले कृषक आंदोलनों में से कुछ के लिये इस असंतोष ने भी योगदान दिया। इस प्रकार इस व्यवस्था ने कुछ कृषक आंदोलनों की पृष्ठभूमि तैयार करने में अप्रत्यक्ष भूमिका निभायी।
- इस व्यवस्था से सरकार को भी हानि हुयी क्योंकि कृषि उत्पादन में वृद्धि के साथ-साथ उसकी आय में कोई वृद्धि नहीं हुयी तथा उसका सम्पूर्ण लाभ केवल जमींदारों को ही प्राप्त होता रहा।
- इस प्रकार स्पष्ट है कि स्थायी बंदोबस्त से सर्वाधिक लाभ जमींदारों को हुआ। यद्यपि सरकार की आय भी बढ़ी किंतु अन्य दृष्टिकोणों से इससे लाभ के स्थान पर हानि अधिक हुयी। इसके अतिरिक्त सम्पूर्ण लाभ 15-20 वर्ष या इससे थोड़े अधिक समय के बंदोबस्त द्वारा प्राप्त किये जा सकते थे और इस बंदोबस्त को स्थायी करने की आवश्यकता नहीं थी।

इस प्रकार स्थायी बंदोबस्त व्यवस्था कुछ समय के लिए भले ही लाभदायक रही हो किन्तु रही हो किंतु इससे कोई दीर्घकालिक लाभ प्राप्त नहीं हुआ। इसीलिये कुछ स्थानों के अलावा अंग्रेजों ने इस व्यवस्था को भारत के अन्य भागों में लागू नहीं किया। स्वतंत्रता के पश्चात सभी स्थानों से इस व्यवस्था को समाप्त कर दिया गया।

रैयतवाड़ी व्यवस्था:

स्थायी बंदोबस्त के पश्चात, ब्रिटिश सरकार ने भू-राजस्व की एक नयी पद्धति अपनायी, जिसे रैयतवाड़ी बंदोबस्त कहा जाता है। मद्रास के तत्कालीन गवर्नर (1820-27) टॉमस मनरो द्वारा 1820 में प्रारंभ की गयी इस व्यवस्था को मद्रास, बम्बई एवं असम के कुछ भागों लागू किया गया। बम्बई में इस व्यवस्था को लागू करने में बंबई के तत्कालीन गवर्नर (1819-27) एल्फिन्सटन ने महत्वपूर्ण योगदान दिया। भू-राजस्व की इस व्यवस्था में सरकार ने रैयतों अर्थात किसानों से सीधा बंदोबस्त किया। अब रैयतों को भूमि के मालिकाना हक तथा कब्जादारी अधिकार दे दिये गये तथा वे सीधे या व्यक्तिगत रूप से स्वयं सरकार को लगान अदा करने के लिये उत्तरदायी थे। इस व्यवस्था ने किसानों के भू-स्वामित्व की स्थापना की। इस प्रथा में जमींदारों के स्थान पर किसानों को भूमि का स्वामी बना दिया गया। इस प्रणाली के अंतर्गत रैयतों से अलग-अलग समझौता कर लिया जाता था तथा भू-राजस्व का निर्धारण वास्तविक उपज की मात्रा पर न करके भूमि के क्षेत्रफल के आधार पर किया जाता था। सरकार द्वारा इस व्यवस्था को लागू करने का उद्देश्य, बिचैलियों (जमीदारों) के वर्ग को समाप्त करना था। क्योंकि स्थायी बंदोबस्त में निश्चित राशि से अधिक वसूल की गयी सारी रकम जमींदारों द्वारा हड़प ली जाती थी तथा सरकार की आय में कोई वृद्धि नहीं होती थी। अतः आय में वृद्धि करने के लिये ही सरकार ने इस व्यवस्था को लागू किया ताकि वह बिचैलियों द्वारा रखी जाने वाली राशि को खुद हड़प सके। दूसरे शब्दों में इस व्यवस्था द्वारा सरकार स्थायी बंदोबस्त के दोषों को दूर करना चाहती थी। इस व्यवस्था के अंतर्गत 51 प्रतिशत भूमि आयी। कम्पनी के अधिकारी भी इस व्यवस्था को लागू करने के पक्ष में थे क्योंकि उनका मानना था कि दक्षिण और दक्षिण-पश्चिम भारत में इतने बड़े जमींदार नहीं है कि उनसे स्थायी बंदोबस्त किया जा सके। इसलिये इन क्षेत्रों में रैयतवाड़ी व्यवस्था ही सबसे उपयुक्त है। हालांकि इस व्यवस्था के बारे में यह तर्क दिया गया कि यह व्यवस्था भारतीय कृषकों एवं भारतीय कृषि के अनुरूप है किंतु वास्तविकता इससे बिल्कुल भिन्न थी। व्यावहारिक रूप में यह व्यवस्था जमींदारी व्यवस्था से किसी भी प्रकार कम हानिकारक नहीं थी। इसने ग्रामीण समाज की सामूहिक स्वामित्व की अवधारणा को समाप्त कर दिया तथा जमींदारों का स्थान स्वयं ब्रिटिश सरकार ने ले लिया। सरकार ने अधिकाधिक राजस्व वसूलने के लिये मनमाने ढंग से भू-

www.ignited.in

राजस्व का निर्धारण किया तथा किसानों को बलपूर्वक खेत जोतने को बाध्य किया।

रैयतवाड़ी व्यवस्था के अन्य दोष भी थे। इस व्यवस्था के तहत किसान का भूमि पर तब तक ही स्वामित्व रहता था, जब तक कि वह लगान की राशि सरकार को निश्चित समय के भीतर अदा करता रहे अन्यथा उसे भूमि से बेदखल कर दिया जाता था। अधिकांश क्षेत्रों में लगान की दर अधिक थी अतः प्राकृतिक विपदा या अन्य किसी भी प्रकार की कठिनाई आने पर किसान लगान अदा नहीं कर पाता था तथा उसे अपनी भूमि से हाथ धोना पड़ता था। इसके अलावा किसानों को लगान वसूलने वाले कर्मचारियों के दुर्व्यवहार का सामना भी करना पड़ता था।

महालबाड़ी पद्धति:

लार्ड हेस्टिंग्स के काल में ब्रिटिश सरकार ने भू-राजस्व की वसूली के लिये भू-राजस्व व्यवस्था का संशोधित रूप लागू किया, जिसे महालवाड़ी बंदोबस्त कहा गया। यह व्यवस्था मध्य प्रांत, यू.पी. (आगरा) एवं पंजाब में लागू की गयी तथा इस व्यवस्था के अंतर्गत 30 प्रतिशत भूमि आयी। इस व्यवस्था में भू-राजस्व का बंदोबस्त एक पूरे गांव या महाल में जमींदारों या उन प्रधानों के साथ किया गया, जो सामूहिक रूप से पूरे गांव या महाल के प्रमुख होने का दावा करते थे। यद्यपि सैद्धांतिक रूप से भूमि पूरे गांव या महाल की मानी जाती थी किंतु व्यावहारिक रूप में किसान महाल की भूमि को आपस में विभाजित कर लेते थे तथा लगान, महाल के प्रमुख के पास जमा कर देते थे। तदुपरांत ये महाल-प्रमुख, लगान को सरकार के पास जमा करते थे। मुखिया या महाल प्रमुख को यह अधिकार था कि वह लगान अदा न करने वाले किसान को उसकी भूमि से बेदखल कर सकता था। इस व्यवस्था में लगान का निर्धारण महाल या सम्पूर्ण गांव के उत्पादन के आधार पर किया जाता था। महालवाड़ी बंदोबस्त का सबसे प्रमुख दोष यह था कि इसने महाल के मुखिया या प्रधान को अत्यधिक शक्तिशाली बना दिया। किसानों को भूमि से बेदखल कर देने के अधिकार से उनकी शक्ति अत्यधिक बढ़ गयी तथा वे यदाकदा मुखियाओं द्वारा इस अधिकार का दुरुपयोग किया जाने लगा। इस व्यवस्था का दूसरा दोष यह था कि इससे सरकार एवं किसानों के प्रत्यक्ष संबंध बिल्कुल समाप्त हो गये।

इस प्रकार अंग्रेजों द्वारा भारत में भू-राजस्व वसूलने की विभिन्न पद्धतियों को अपनाया गया। इन पद्धतियों को अलग-अलग क्षेत्रों में अलग-अलग समय पर लागू किया गया। किंतु इन सभी प्रयासों के पीछे अंग्रेजों का मूल उद्देश्य अधिक से अधिक भू-राजस्व को हड़प कर अपनी आय में वृद्धि करना था तथा किसानों की भलाई से उनका कोई संबंध नहीं था। इसके कारण धीरे-धीरे भारतीय कृषक वर्ग कंगाल होने लगा तथा भारतीय कृषि बर्बाद हो गयी।

दोष:

महलवाड़ी बंदोबस्त का सबसे प्रमुख दोष यह था की इसने महाल के मुखिया या प्रधान को अत्यधिक शक्तिशाली बना दिया। यदा कदा मुखिया के द्वारा इस शक्ति का दुरूपयोग किया जाता था। इस व्यवस्था के आने से सरकार और किसानों के बीच प्रत्यक्ष सम्बन्ध बिलकुल समाप्त हो गए।

निष्कर्ष

भारत पर पहली बार अब एक पूंजीवादी राष्ट्र का शासन था और इसका भारत की आर्थिक संरचना पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। भारतीय समाज के पुरातन आर्थिक आधार का उन्मूलन कर उसकी जगह पूंजीवादी व्यवस्था की स्थापना किए बिना ब्रिटेन अपनी खुद की पूंजीवादी आर्थिक आवश्यकताओं के लिए औपनिवेशिक भारत का समुचित उपयोग नहीं कर सकता था। भारत पर अंग्रेजों के राजनीतिक प्रभुत्व के विस्तार की दिशा में उठाया गया हर कदम पुरानी अर्थव्यवस्था के विघटन और नए आर्थिक रूपों के उन्नयन की दिशा में ही अलग कदम था। यहां अंग्रेजों का प्रमुख उद्देश्य अधिकतम लाभ अर्जित करना था। लगान की नई व्यवस्था के साथ जमीन के रेहन और खरीद-बिक्री की भी प्रथा शुरू हुई। जब फसल या अपनी औकात के बल पर किसान राज्य को भूमिकर नहीं चुका पाता, तब उसे अपनी जमीन रेहन करनी पड़ती थी। इस तरह नए शासन तंत्र में जमीन का स्वत्व और स्वामित्व अनिश्चित हो गया। नई भूमि व्यवस्था ने गाँव के सामुदायिक जन-जीवन और उसकी स्वपर्याप्ता को बेतरह झकझोर दिया। यह कृषक समुदाय की ऋणग्रस्तता और गरीबी का मुख्य कारण सिद्ध हुआ।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

बी॰आर॰ थॉमलिंसन, आधुनिक भारत की अर्थव्यवस्था, (अंग्रेजी में), 1860-1970 (1996) पृ॰ 5।

बी॰एच॰ टोमलिंसन, 1880-1935, “भारतीय आर्थिक और सामाजिक इतिहास की समीक्षा,(अक्टूबर 1975), पृ॰ 337-380।

www.ignited.in

सब्यसाची भट्टाचार्य (2008). आधुनिक भारत का आर्थिक इतिहास. राजकमल प्रकाशन. प॰ 48-51

इस्तमरारी बन्दोबस्त (हिन्दी) अभिगमन तिथिः 25 जनवरी, 2014

पेर्सिवल स्पीयर (1990) (अंग्रेजी में), भारत का इतिहास,. नई दिल्ली और लंदनः पेंगुइन बुक्स. प॰ 298

Cohn, Bernard S. (August 1960). "The Initial British Impact on India: A case study of the Benares region". The Journal of Asian Studies. Association for Asian Studies. 19 (4): 418–431.

Ranajit Guha, A rule of property for Bengal: an essay on the idea of permanent settlement, Durham, Duke U Press (1996)

Corresponding Author

Monu*

M.A. in History (UGC NET /JRF) MDU, Rohtak

mail2monurohilla@gmail.com